Scholarly Research Journal for Humanity Science & English Language,
Online ISSN 2348-3083, SJ IMPACT FACTOR 2017: 5.068, www.srjis.com
PEER REVIEWED JOURNAL, JUNE-JULY 2018, VOL- 6/28

हिन्दी कहानी में विभाजन की घटना : सत्ता और संस्कृति का संघर्ष

संध्या गर्ग, Ph. D.

एसोसिएट प्रोफेसर, जानकी देवी मेमोरियल कॉलेज, दिल्ली

Abstract

किसी भी समाज और देश की परिस्थितियाँ, उसके साहित्य के प्रेरक तत्त्वों के रूप में कार्य करती हैं। सहृदय होने के नाते समाज में घटने वाली अच्छी–बुरी घटनाओं से प्रभावित होकर ही साहित्य की कोई रचना जन्म लेती है। इस सन्दर्भ में भारतीय इतिहास के काले पृष्ठों में दर्ज विभाजन की घटना आने वाले समय में साहित्य की लगभग हर विधा के केन्द्र में रही। जहाँ तक हिन्दी कहानी का प्रश्न है, स्वतन्त्रता के बाद का पूरा दशक इसी घटना से प्रभावित समाज के टूटन और बिखराव को लेकर लिखा गया है। वस्तुतः लेख में विभाजन की पृष्ठभूमि, मानसिकता, पीड़ा, प्रभाव को चित्रित करती कुछ प्रमुख कहानियों को विषय बनाया गया है।

बीजशब्द : *विभाजन, राजनैतिक अराजकता, गतिहीनता, उपनिवेशवाद, धार्मिक कट्टरता, यथार्थ, त्रासदी, मूल्यहीनता, भाईचारा, आदर्श की स्थापना, नैतिक आग्रह।*

Scholarly Research Journal's is licensed Based on a work at www.srjis.com

अठारहवीं सदी को अधिकतर विद्वानों ने भारत के लिए अंधकारपूर्ण युग कहा है। राजनैतिक अराजकता, बौद्धिक गतिहीनता तथा सांस्कृतिक पिछड़ापन कुछ कारण थे जिन्होंने अंग्रेजों को इस देश को उपनिवेश बनाने में बहुत सहायता की। मुग़ल सत्ता के ह्रास के बाद विशेष रूप से जो अराजकता फैली उससे यह मौका किसी को भी सुलभ हो गया था कि वे इस देश में अपनी सत्ता स्थापित कर ले। गुलाम हुसैन ने लिखा है– "ऐसे ही निकम्मे प्रशासन का परिणाम है कि हिंद का हर हिस्सा बर्बाद हो गया है, और यहाँ के हर हताश निवासी का दिल टूट गया है। अंग्रेजों के आगमन से पूर्व भारतीय नगरों और गाँवों की संस्कृतियों में विशेष अंतर नहीं था। मुस्लिम संस्कृति से प्रभावित होकर भी गाँवों और नगरों की सांस्कृतिक संवेदना में मूलभूत अंतर नहीं उत्पन्न हुआ था। औद्योगिक सभ्यता के संदर्भ के परिणामस्वरूप दोनों के बीच की सांस्कृतिक खाई बढ़ती गई और परस्पर असमंजस और अविश्वास की स्थितियाँ भी उत्पन्न होने लगीं। नतीजा यह है कि वर्तमान समय की अतीत से तुलना करने पर कोई भी यह सोचेगा कि संसार सर्वत्र जड़ता से ग्रस्त है और धरती पर कभी न मिटने वाला अंधकार छा गया है।"

इन स्थितियों का प्रभाव देश की संस्कृति, कला, साहित्य, राजनीति और सामान्य जन जीवन सभी पर पड़ा। मजूमदार के अनुसार– "सदियों से धार्मिक विचारों तथा सामाजिक रीति–रिवाजों के एक निश्चल समूह के साँचे में ढले गतिशून्य जीवन पर अचानक एक नई धारा फूट पड़ी। उससे धर्म के प्रति आलोचनात्मक दृष्टिकोण का जन्म हुआ और राज्य तथा समाज के उद्भव के तलाश की भावना जागृत हुई।"

औपनिवेशिक भारत में एक ओर तो अपनी परंपरा की रूढ़ रीतियों के प्रति संघर्ष था तो दूसरी ओर अंग्रेजों के वर्चस्व को अस्वीकार करने की लड़ाई भी चल रही थी। इस संघर्ष ने एक लंबे समय के बाद भारत को मुक्ति दिलाई पर साथ ही साथ विभाजन की दुखद त्रासदी झेलने के लिए भी मजबूर किया। विभाजन के समय जो उन्माद दिखाई दिया वह किसी तात्कालिक घटना का परिणाम नहीं था। जातीय विद्वेष की यह प्रक्रिया एक लंबे समय से विकसित होती चली आ रही थी। आरंभ में सामाजीकरण की दृष्टि से जातिप्रथा की एक सर्जनात्मक भूमिका रही होगी पर बाद में जातिप्रथा की रेखाएँ बहुत कठोर हो गई थीं। इस्लाम धर्म के शासकों ने यह जान लिया था कि भारत की अपनी एक समृद्ध परंपरा और संस्कृति है अतः यहाँ अन्य किसी धर्म का प्रवेश उतना सरल नहीं होगा। अतः इस्लाम धर्म ने अपनी बाँहे सभी के लिए फैला दीं, जिससे हिंदू धर्म की जातिगत कठोरता, धार्मिक संकीर्णता से घबराए लोगों ने इस धर्म को स्वीकार किया लेकिन दोनों ही धर्मों के उच्च सभ्रांत लोगों में इतनी उदारता नहीं थी। दोनों ही दूसरे धर्म के लोगों के लिए मन में घृणा का भाव रखते थे। तुगलक ने जैन विद्वान जिनप्रभा सूरि का जब स्वागत किया तो उलेमाओं ने इसका घोर विरोध किया था।

पन्द्रहवीं और सोलहवीं सदी के आरंभ में विशिष्ट वर्ग की राजनैतिक व सामाजिक श्रेष्ठता को धक्का लगा। समाज के निचले तबकों से सामाजिक व धार्मिक नेता निकलकर आए जिन्होंने मानवता और एक ईश्वर की धारणा पर बल दिया। उन्होंने जातिप्रथा की निंदा की। रामानंद, कबीर, जायसी सभी का मानवीय एकता और मानव धर्म पर ही बल रहा। इस्लाम धर्म के प्रसार के साथ हिंदू–मुस्लिम समाज ने एक दूसरे के रीति–रिवाज अपनाए। हिंदू स्त्री पर्दा करने लगी और मुस्लिमों में जाति व्यवस्था कठोर होती गई। अकबर ने एक राष्ट्रीय राजतंत्र की स्थापना का प्रयास किया जिसमें शासक–प्रजा के संबंध का जाति से कुछ लेना–देना नहीं था। उसने दीन–ए–इलाही धर्म चलाया। एक लंबे समय तक कोई

जातिगत विद्रोह नहीं पनप सका पर औरंगजेब की धार्मिक कट्टरता ने फिर से इसे हवा दी और शायद पहली बार हिंदू–मुस्लिम सांप्रदायिकता इतनी मुखर हो कर सामने आई। प्रभा दीक्षित का कथन है – "भारतीय इतिहास की गहराई में जाने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि संप्रदायवाद का मूल सत्ता के द्वंद्व में था, धर्म में नहीं। संप्रदायवाद लोकतंत्रीय राष्ट्रवाद के विरुद्ध स्थापित अभिजात वर्ग की राजनैतिक प्रक्रिया था, एक समुदाय की धार्मिक भावना की राजनैतिक अभिव्यक्ति नहीं। यह स्पष्ट करता है कि धर्म नहीं सत्ता ही हिंदू–मुस्लिम द्वेष का प्रमुख कारण रही।"

मुस्लिम शासकों के बाद अंग्रेजों के आगमन ने स्थितियों में कुछ अधिक परिवर्तन नहीं किया। अंग्रेजों ने 'फूट डालो, शासन करो' की नीति से काम लेते हुए हिंदू–मुस्लिम मतभेद उत्पन्न करने प्रारंभ कर दिए। 1857 के विद्रोह के बाद मुस्लिम बादशाह को रंगून भेजना, उसके पुत्रों की हत्या इस दिशा में अंग्रेजों की ही कारगुज़ारी थी। इन घटनाओं ने मुस्लिमों के मन में इस देश के प्रति और लोगों के प्रति घृणा को बहुत बढ़ावा दिया। अंग्रेजों की नीतियों और शासनतंत्र के परिवर्तन से मुस्लिम समाज में वहाबी आंदोलन जो की हिंसा के माध्यम से ब्रिटिश शासन समाप्त करना चाहता था तथा अलीगढ़ आंदोलन जो पश्चिमी शिक्षा–दीक्षा को मुस्लिम विकास में आवश्यक समझता था, ये दो अलग धाराएँ उत्पन्न हुई।

अलीगढ़ आंदोलन के प्रवर्तक सर सैÕयद अहमद खाँ मुस्लिमों की बिगड़ती स्थिति से चिंतित थे। उन्होंने एक ओर मुस्लिमों में इस धारणा को समाप्त करने का प्रयास किया कि अंग्रेजी भाषा और आधुनिक बदलाव उन्हें अपने धर्म से दूर ले जायेंगे वहीं दूसरी ओर अंग्रेजी शासन को भी यह विश्वास दिलाया कि मुस्लिम उनके विरूद्ध नहीं है। 1906 में आगा खाँ के नेतृत्व में मुस्लिम प्रतिनिधित्व की माँग की गई। इन बातों ने सदियों की सांस्कृतिक विरासत और एकता की प्रवृत्ति के लिए किए गये प्रयासों को बहुत ठेस पहुँचाई। नेहरू ने लिखा– मुझे तो स्पष्ट बात यह मालूम पड़ती है कि दोनों तरफ के सांप्रदायिक नेता एक छोटे से उच्चवर्गीय प्रतिक्रियावादी गिरोह के प्रतिनिधि होने के सिवा और कुछ नहीं है। ये लोग जनता के धार्मिक जोश का अपने स्वार्थ–साधन के लिए दुरूपयोग करते हैं और उससे बेजा फायदा उठाते हैं। दोनों ओर आर्थिक प्रश्नों को टालने और दबाने की भरसक कोशिश की जाती है।

Copyright © 2018, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

सन् 1940 में लीग के अधिवेशन में जिन्ना ने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा है– हिन्दुओं और मुस्लिमों का संबंध दो विभिन्न धार्मिक दर्शनों, सामाजिक रीति–रिवाजों और साहित्यों से हैं... हिंदु और मुसलमान दो विभिन्न ऐतिहासिक स्रोतों से प्रेरणा प्राप्त करते हैं। उनके महाकाव्य भिन्न, वीरनायक भिन्न और उपन्यास भी विभिन्न है। ऐसे दो संप्रदायों को एक ही राष्ट्र में जोतना, जबकि उनमें से एक अल्पसंख्यक और दूसरा बहुसंख्यक है, असंतोष को बढ़ावा देता है। इस आधार पर जो भी भावी प्रशासनिक ढाँचा खड़ा किया जाएगा वह कुछ ही दिनों में ढह जाएगा। इस आधार पर विभाजन के प्रस्ताव को तैयार किए जाने लगा। 1940 से 1947 की आजादी की लड़ाई का समय पाकिस्तान बनाने की लड़ाई का भी समय है। दूसरी तरपफ हिंदु महासभा ने भी अपनी संस्कृति और मुस्लिम शासकों के अत्याचारों को याद करना प्रारंभ कर दिया ताकि भारत को एक हिंदु राष्ट्र बनाने के लिए सभी हिंदु प्राण प्रण से एक हो जाएँ। इन घटनाओं ने विभाजन की राह तैयार कर दी थी। सन् 1942 में क्रिप्स मिशन ने मुस्लिम लीग की पाकिस्तान माँग का समर्थन यह कह कर किया कि यदि कोई प्रान्त भारतीय संघ में सम्मिलित नहीं होना चाहेगा तो ऐसे प्रान्तों को अपना पृथक संघ बनाने का पूर्ण अवसर दिया जाएगा। यह अंग्रेजों की चाल थी जो भारत को दो खंडों में बाँटना चाहते थे। 16 अगस्त 1946 का दिन विरोध सभाओं के रूप में आयोजित करने का निश्चय किया। दूसरी ओर हिंदु महासभा ने भी हिंदू धर्म के बचाव का नारा लगा कर उसे भड़काने में सहयोग दिया।

16 अगस्त, 1946 को कलकत्ता में फैले सांप्रदायिक दंगों से हिंसा का भयानक दौर प्रारंभ हुआ। सत्ता के निकट हस्तांतरण की संभावना ने सामूहिक स्तर पर दंगों की राजनीति प्रारंभ करने में पूरा सहयोग दिया। कलकत्ता के बाद नौमारवली, बिहार, उत्तर प्रदेश, पंजाब सभी जगह हिंसा की लहर फैल गई। दोनों धर्मों की बहुलता वाले इलाके में विरोधी धर्मों पर जमकर हिंसा की गई। इन स्थितियों में 3 जून 1947 को सत्ता हस्तांतरण की नई योजना प्रकाशित हुई जिसमें ब्रिटिश भारत को दो स्वतंत्र डोमिनियनों में बाँट दिया गया। 18 जुलाई 1947 को ब्रिटिश पार्लियामेंट ने दो स्वतंत्र डोमिनियनों का निर्माण 'इंडियन इंडिपेडेंस एक्ट' के अधीन कर दिया। विभाजन को नेहरू ने स्वीकार करते हुए कहा लेकिन जिस तरह डूबते हुए मनुष्य के लिए सिवा उस चीज को पकड़ने के कोई चारा नहीं

Copyright © 2018, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

रह जाता, जिससे उसकी जान बच जाए, उसी तरह असल में हममें से किसी के लिए उसके सिवा और कोई मार्ग न था।

विभाजन की घटना दो संस्कृतियों के मिलकर रहने के प्रयास में सत्ता के हस्तक्षेप का एक उदाहरण है। दोनों ही संस्कृतियों के समान्यजन एक–दूसरे की संस्कृति के साथ रहने का मन बना भी लेते पर इतिहास के कुछ दुःखद उदाहरणों ने तथा सत्ता के सियासती खेलों ने इस को सम्भव नहीं होने दिया। राममनोहर लोहिया ने लिखा – 'जो शक्ति पृथकता में महत्त्वपूर्ण है, वह है इतिहास के प्रति ख़ास दृष्टि। गुट और जमात का निर्माण मूल रूप से इस कारण से होता है, कि वे घटनाओं के प्रति क्या दृष्टिकोण रखते हैं। ऐसे हिन्दू विरले ही हैं जो एक मुसलमान शासक या इतिहास पुरुष को अपने पुरखे के रूप में स्वीकार करें, उसी तरह ऐसा मुसलमान भी विरला होगा जो किसी हिन्दू इतिहास पुरुष को अपना पुरखा स्वीकार करे। इतिहास के ऐसे शोधकर्ताओं की भी कमी नहीं है, जिन्होंने सभी मुस्लिम शासकों और आक्रमणकारियों की सूची एक साथ इतिहास के पन्ने पर लिख दी है।' वस्तुतः भारत की जनता धर्मभीरु जनता है। राजनैतिक परिवर्तन जनता को हिलाने में असमर्थ हैं, लेकिन जब धर्म और सत्ता मिलकर खेल खेलते हैं तो इस देश ने बड़े–बड़े साम्प्रदायिक युद्ध झेले हैं। भारत विभाजन, धर्म की अफ़ीम में डूबी जनता और उसकी बेहोशी का फ़ायदा उठाती सत्ता के खेल का परिणाम था, जिसने भारत की स्वतंत्रता के साथ विभाजन के कलंक को हमेशा के लिये जोड़ दिया। इस घटना का प्रभाव सामान्य जनता के साथ साहित्य पर भी दिखाई देता है।

किसी भी देश की परिस्थितियाँ और समाज उस देश के साहित्य की प्रेरणा और आईना दोनों होते हैं। विभाजन की इस त्रासदी का प्रभाव आज तक भी वह पीढ़ी नहीं भूल पाई है जिसने उन दंगों को झेला था तो यह कैसे संभव था कि साहित्य इस घटना से अछूता रह पाता। विशेष रूप से कथा–साहित्य में विभाजन की घटना को लेकर बहुत कुछ लिखा गया जो लेख कइस विभीषका से गुज़रे थे उनकी रचनाओं में इस दर्द की टीस अत्यंत भावुकता के साथ अभिव्यक्त हुई है। अमृतराय (बीज), भगवती चरण वर्मा (भूले बिसरे चित्र), कमलेश्वर (लौटे हुए मुसाफिर), भीष्म साहनी (तमस), यशपाल (झूठ–सच भाग–2), चतुरसेन शास्त्री (धर्मपुत्र) उपन्यासकारों ने विभाजन की घटना और उसके परिणामों का चित्रण किया है। वहीं हिंदी कहानी विभाजन की घटना को लेकर आदर्श और यथार्थ के संघर्ष में उलझ

Copyright © 2018, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

गई थी। इस समय हुए भीषण रक्तपात ने कहानीकार के आदर्शो को झिंझोड़ कर रख दिया था। इस त्रासदी में समाप्त होते मानवमूल्यों के पुर्नजन्म, कुकृत्यों पर व्यक्ति के पश्चाताप और कहीं–कहीं मानवीयता की मृत्यु– यही सब हिंदी कहानी में व्यक्त हुआ हैं। हिंदी कहानी किसी वर्ग विशेष या धर्म विशेष को लेकर नहीं चली बल्कि दंगों से प्रभावित लोगों के लिए एक मानवीय आधार प्रदान करने का प्रयत्न किया। शिवशंकर पांड़ेय ''देश विभाजन और सांप्रदायिक दंगों की भीषण लपटों में जलते मानवीय मूल्यों और सिसकती आस्थाओं को लेखकीय तटस्थता और ईमानदारी के साथ आज की कहानी में चित्रित किया गया है।'

विभाजन से संबंद्ध कहानियाँ तीन भागों में बाँटी जा सकती है– विभाजन के पूर्व की मानसिकता, विभाजन के दौरान और विभाजन के बाद की मानसिकता। पूर्व की मानसिकता में अज्ञेय की कहानी 'रमन्ते तत्र देवता' मुख्य है– अगस्त, 1946 के दंगे भड़कने के कारण एक बंगाली हिंदु स्त्री अपने पति के पास नहीं पहुँच पाती, एक गुरुद्वारे में शरण लेती है। अगले दिन घर जाने पर पति उसे स्वीकार नहीं करता, सरदार जी जत्था बना कर उसके घर जाते हैं तो वह डर कर उसे घर में प्रवेश करने देता है। भाव ऐसा दर्शाता है कि जैसे वह देवता हो। यह मानव में छिपे हैवान की दरिंदगी है। अपनी ही पत्नी पर अविश्वास करते इस व्यक्ति के लिए सरदार जी कहते हैं– तब यही देखता हूँ कि वह औरत घर से दुत्कारी जा कर मुसलमान हो, मुसलमान जने, ऐसे मुसलमान जो एक–एक सौ–सौ हिंदुओं को मारने की कसम खाए और आप तो साइक्लोजी पढ़े हैं न, आप समझेंगे– हिंदु औरतों के साथ सचमुच करे जिसकी झूठी तौहमत उसकी माँ पर लगाई गई। विभाजन की घटना में सबसे अधिक प्रभावित स्त्री हुई थी। एक दूसरे के घरों की स्त्रियों का अपमान करके और उनकी अस्मत लूट कर ही बहुत सारे आततायी इस गर्व में थे कि उन्होंने अपने धर्म का बदला ले लिया है। विभाजन की घटना एक घर से दूसरा घर बदलने की सामान्य घटना नहीं थी। अज्ञेय ने इस कहानी में यह भी व्यंग्य किया कि विभाजन करने वाले और विभाजन का समर्थन करने वाले लोगों ने सोचा कि यह ऐसे ही होगा जैसे एक नासिका बंद होने पर कोई दूसरी नासिका से श्वास लेने लगेगा।

दूसरी श्रेणी में विभाजन की घटना को लेकर लिखी गई कहानियाँ हैं। अज्ञेय की कहानियाँ 'मुस्लिम–मुस्लिम भाई–भाई', 'शरणदाता', 'रज़ील', भीष्म साहनी की 'अमृतसर आ गया है',

विष्णु प्रभाकर की 'तांगेवाला', चंद्रगुप्त विद्यासागार की 'मास्टर साहब', कृष्णा सोबती की 'सिक्का बदल गया' प्रमुख कहानियाँ है। इनमें भी 'शरणदाता' मील का पत्थर कही जा सकती है। रफीकूद्दीन की पुत्री द्वारा दी गई पची 'खाना खाने से पहले शिलाव को खिलाना' से देविन्दरलाल के प्राण बचते हैं और बदले में ज़ेबू के आग्रह कि 'किसी मुसलमान पर ऐसा समय आने पर उसकी रक्षा करें', को वह रख नहीं पाते और उस पर्ची को हवा में उड़ा देते हैं। रफीकूद्दीन अपने मित्रों के सामने व्यंग्य में कहते हैं– ''हम अपने पड़ोसी की हिफाजत नहीं कर सके तो मुल्क की क्या खाक करेंगे।[8] एक अन्य स्थल पर अज्ञेय ने उपरोक्त घटना की पृष्ठभूमि बनाते हुए लिखा है– ''विषाक्त वातावरण, द्वेष और घृणा की चाबुक से फड़फड़ाते हुए हिंसा के घोड़े, विष फैलाने को संप्रदायों के अपने संगठन और उसे भड़काने को पुलिस और नौकरशाही।[9] देविंदरलाल ने जाना कि दुनिया में खतरा बुरे की ताकत के कारण नहीं, अच्छे की दुर्बलता के कारण है। इस तरह के कथन उस समय की स्थिति, और लोगों के उसे स्वीकार कर लेने की मानसिकता पर भी विचार करते हैं कि क्यों चंद राजनीतिज्ञों और धार्मिक नेताओं का फैसला सारी जनता को मान्य हो गया।

कृष्णा सोबती की कहानी 'सिक्का बदल गया' मानवीय मूल्यों की निरर्थकता के अहसास को लेकर लिखी गई है। पूर्वी पंजाब के गाँव में रहने वाली साहणी समृद्ध है और गाँव भर में इज्ज़त पाती है पर उसी की ज़मीन की देखभाल करने वाला शेरा उसे मारने की योजना बना रहा है, इसका आभास होते ही वह गाँव छोड़ने का निर्णय लेती है। सिक्का बदलने से आपसी संबंधों की परिभाषा बदलने का उसे आभास होता है। यहाँ कृष्णा सोबती ने मानवीय मूल्यों के अन्तर्द्वंद्व को भी अभिव्यक्ति दी है, शेरा को लगता है कि वह साहणी की हत्या नहीं कर पाएगा। साहणी का गहरा मौन भी यातना की भीषणता को बिन बोले ही चीख–चीख कर व्यक्त करता है। भीष्म साहनी की कहानी 'अमृतसर आ गया है' की चर्चा करना भी समाचीन होगा। एक रेल यात्रा के दौरान पाकिस्तान के क्षेत्र से गाड़ी निकलते हुए हिंदु वर्ग घबराया हुआ है, वह अपमान सह रहा है पर अमृतसर आते ही वही हिंदु युवक मुस्लिम दंपति के साथ अमानवीय व्यवहार करता है। अज्ञेय ने कहीं लिख है– 'दर्द सबको मांजता है और जिन्हें मांजता है उन्हें यह सीख देता है कि औरों को उससे मुक्त रखें।' पर यहाँ तो स्थिति विपरीत थी जिसे भी जो दर्द मिला था वह उसे दूसरों को

Copyright © 2018, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

दोगुना करके दे रहा था। युवक का व्यवहार पूरे मुल्क का व्यवहार को इंगित करता है कि भावावेश और उत्तेजना में बिना सोचे दंगा छेड़ दिया गया था पर बाद में अधिकतर लोग ग्लानि और हक्के–बक्के थे कि क्या हो गया।

विभाजन के बाद की मानसिकता की कहानियों की संख्या भी काफी है। यह वह समय था जिसे लेखक जगत् स्वयं भोग रहा था। एक ही देश के लोग दो देशों और संस्कृतियों में बँट गए थे। पुराने घर परिवेश के प्रति मोह तथा नए माहौल में व्यवस्थित होने की जद्दोजहद में लोगों को समझ नहीं आ रहा था कि वे किस प्रकार जड़ों से कट कर फल पाएँगे। इन परिस्थितियों व मानसिक द्वंद्व को विभाजन की कहानियों ने बहुत मार्मिक ढंग से अभिव्यक्ति दी है। मलबे का मालिक (मोहन राकेश), क्लेम (मोहन राकेश), चारा काटने की मशीन, टेबल लैंड (उपेन्द्र नाथ अश्क), लेटर बॉक्स (अज्ञेय), बदला (अज्ञेय), पानी और पुल (महीप सिंह), मेरा वतन (विष्णु प्रभाकर), अगम–अथाह (विष्णु प्रभाकर), मैं जिंदा रहूँगा (विष्णु प्रभाकर), अंतिम इच्छा (बदी उज्जमां), परदेसी (बदी उज्जमां), तबेले का धुंधलका (रांगेय राघव) कई प्रसिद्ध कहानियाँ है जो इसी थीम को लेकर लिखी गई हैं।

मोहन राकेश की कहानीं 'मलबे का मालिक' कलासिक कहानी है। विभाजन के दंगों के बाद भाईचारा, विश्वास, नैतिकता, मानवता का जो मलबा बचा था, उसका मालिक एक कुत्ता था, जो उस मलबे पर बैठकर भौंकता रहता है। गनी खाँ के छूटे हुए घर का मलबा, उस पर बैठो कुत्ता प्रतीक हैं। यह कुत्ता इंसान के अंदर छिपा हुआ पशु है। दूसरी ओर महीप सिंह की कहानी 'पानी और पुल' आशा और उम्मीद की कहानी है। 'पत्थर और लोहे के बने उस मजबूत पुल को अंधेरे में मैं देख रहा था। मेरी दृष्टि और नीचे की ओर भी जा रही थी, वहाँ घुप्प अँधेरा था, पर मैं जानता था वहाँ पानी है, जेहलम नदी का कल–कल करता हुआ स्वच्छ और निर्मल पानी, जो उस पत्थर और लोहे के बने हुए पुल के नीचे से बह रहा था।'

इस प्रकार विभाजन को विषय बना कर लिखी गई इन कहानियों में जहाँ एक ओर विभाजन की त्रासदी है तो दूसरी ओर नए परिवेश में फिर से जीने का आत्मविश्वास पैदा करने की कोशिश है। कहानियों के शीर्षक कहानी की विषयवस्तु को व्यक्त करते से प्रतीत होते है। जहाँ तक पात्रों का प्रश्न है, वे हमारे आस–पास के परिवेश से लिए हुए है। अधिकतर पात्र व्यक्तिगत नहीं वर्गगत प्रतिनिधित्व करते है। वे आदर्श की स्थापना नहीं कर

रहे, यथार्थ भोगते सजीव व्यथा की प्रतिमूर्ति हैं। कहानीकार ने प्रतीकों के माध्यम से बात कही है– मलबे का मालिक, चारा काटने की मशीन, तबेले का धंधलक सभी प्रतीक हैं जो विभाजन के इस वातावरण को पाठक के समक्ष प्रस्तुत कर देते हैं। इन कहानियों की भाषा भी नये तेवर की है। वह स्पर्श........ वह कल्पना........ क्लैम.....। जो वातावरण बाहर था अनिशिचितता थी, वह भाषा में भी स्पष्ट दिखाई देती है।

समाहार : सार रूप में कहा जा सकता है कि विभाजन से संबंधित कहानियाँ सामाजिक दायित्व और दायित्व हीनता, मानवीय संवेदना और संवेदना हीनता के बोध से जुड़ी हैं। पुराने मूल्यों, आदर्शो, नैतिक आग्रहों, हिंसक कार्यवाहियों के अचानक थम जाने से जो नये मूल्यबोध उपजे, उनमें विवशता, निराशा, कुंठा, पराजय बोध था। अपने परिवेश से मुँह चुराते आदमी की बची हुई आस्था को तलाशती ये कहानी 'नयी कहानी' के आंदोलन का भी आधार बनी। इसमें संदेह नहीं है।

संदर्भ ग्रंथः

(1). वी.पी.एस. रघुवंश, इंडियन सोसायटी इन दि ऐटींथ सेंचुरी में उद्दत

(2). आर.सी. मजूमदार, ब्रिटिश पैरामाउंटसी एंड इंडियन रिनासां, भाग 2

(3). सांप्रदायिकता का ऐतिहासिक संदर्भः प्रभा दीक्षित, मैकमिलन कंपनी ऑफ इंडिया

(4). जवाहरलाल नेहरू, साम्प्रदायिकता और प्रतिक्रिया, मेरी कहानी, सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन

(5). स्वातंत्र्योतर हिंदी कहानी कथ्य और शिल्प, शिवशंकर पांडेय, आलेख प्रकाशन

(6). अज्ञेय, ये तेरे प्रतिरुप, राजपाल एंड संस

(7). महीप सिंह की समग्र कहानियाँ, अभिव्यंजना प्रकाशन

Copyright © 2018, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies